लक्ष्मण सिंह (मृतक) जरिये विधिक प्रतिनिधि एवं अन्य

बनाम

हजारा सिंह (मृतक) जरिये विधिक प्रतिनिधि एवं अन्य

(2008 की सिविल अपील सं. 3322)

6 मई, 2008

[एस. बी. सिन्हा और लोकेश्वर सिंह पांटा, जे. जे.]

परिसीमा अधिनियम, 1963: धारा 3 – वाद-परिसीमा द्वारा वर्जन—साबित करने का भार - उच्च न्यायाल ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यह साबित करने का भार प्रतिवादीगण पर था कि वाद परिसीमा अवधि से परे दायर किया गया था । अभिनिर्धारित – हमारी राय में उच्च् न्यायालय पूर्णतः गलत था । परिसीमा का बिन्दु क्षेत्राधिकार का प्रश्न है - एस 3 न्यायालय पर एक ऐसा मुकदमा जो परिसीमा द्वारा वर्जित पाया गया हो उस पर विचार करने के लिए प्रतिबंध लगाती है - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 - एस 9

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908: आदेश 41 नियम 27 (1) (a) और (aa)-अतिरिक्त साक्ष्य-प्रस्तुत करना- 1970 में दायर किया गया मोचन के लिए वाद-प्रतिवादी की यह दलील रही कि एक पंजीकृत बंधक विलेख 1913 में निष्पादित किया गया था - प्रतिवादी ने यह प्रमाणित करने के लिए बंधक प्रस्तुत करने की अनुमति मांगी कि मुकदमा परिसीमा की अवधि के भीतर था, आदेश दिया गया - मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, प्रतिवादी को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दी गई।

वाद की संपित्त के संबंध मे बंधक का लेन-देन पार्टियों के हित में पूर्ववर्तियों द्वारा उनके मध्य दर्ज किया गया था। बंधक विलेख के निष्पादन की वास्तविक तारीख वादी-प्रत्यर्थी को ज्ञात नहीं थी। हालांकि, उक्त गिरवी रखी गई संपित्तयों को 19-03-1913 को या उसके आसपास गिरवी रखी गई संपति के नाम पर उत्परिवर्तित कर दिया गया था।

उक्त बंधक के मोचन के लिए प्रतिवादियों द्वारा 30-12-1970 को एक मुकदमा दायर किया गया था। विचारणीय न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय ने उक्त मुकदमे को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि यह परिसीमा से बाधित है, यह कहते हुए कि बंधक की वास्तविक तारीख ज्ञात नही होने के कारण, बंधक के मोचन के लिए डिक्री पारित नहीं की जा सकती है।

उच्च न्यायालय ने यह कहते हुए अपील स्वीकार कर ली कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पार्टियों के बीच गिरवीकर्ता और गिरवीदार के रूप में संबंध साबित हो गया है। यह प्रमाणित करने का दायित्व प्रतिवादियों पर है कि मुकदमा परिसीमा के कारण वर्जित था।

इस न्यायालय में अपील में, अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि परिसीमा क्षेत्राधिकार का एक प्रश्न है, उच्च न्यायालय ने दूसरी अपील की अनुमति देकर गंभीर त्रुटि की है और चूंकि उक्त उत्परिवर्तन की तारीख बंधन की तारीख नहीं थी, इसलिए मुकदमे को परिसीमा से वर्जित माना जाना चाहिए था ।

प्रतिवादियों ने तर्क किया कि प्रतिवादी द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य जोड़ने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था, जैसा कि आदेश 41 नियम 27 सी.पी.सी. के तहत परिकल्पित किया गया था कि बंधक का विलेख जो पंजीकृत किया गया था, प्रतिवादियों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है जिस पर यदि विचार किया जाता है तो यह स्पष्ट रूप से

प्रमाणित होगा कि यह वाद दिनांक 20-02-1913 को निष्पादित होने की निर्धारित समय सीमा के भीतर था।

आंशिक रूप से अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि -

1. उच्च न्यायालय का यह मानना पूरी तरह से गलत था कि मुकदमा परिसीमा से परे था, यह साबित करने का दायित्व प्रतिवादियों पर था । सीमा क्षेत्राधिकार का प्रश्न है। अधिनियम की धारा 3 न्यायालय पर एक ऐसा मुकदमा जो परिसीमा द्वारा वर्जित पाया गया हो उस पर विचार करने के लिए प्रतिबंध लगाती है । [पैरा 9] [833 C]

2.1. उच्च न्यायालय द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के आवेदन पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। प्रतिवादियों ने अतिरिक्त साक्ष्य जोड़ने के लिए एक मामला बनाया है । यह कहा गया था कि बंधक विलेख वर्ष 1913 में लाहौर जिले में पंजीकृत किया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि न्यायालय द्वारा इस तरह के आवेदन पर विचार करने के लिए मनाही की जानी चाहिए लेकिन प्रतिवादियों ने इसके लिए पर्याप्त आधार बनाए हैं। चूँकि यह एक पंजीकृत दस्तावेज है, ऐसी स्थिति में इस न्यायालय को नीचे दिये गये न्यायालयों के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए को उक्त आवेदन की अनुमति देनी चाहिए। [पैरा 10,11] [833-डी, ई]

2.2 अपीलीय न्यायालय के क्षेत्राधिकार का प्रयोग न केवल तब किया जाना चाहिए जब आदेश 41 के नियम 27 का उपनियम (1) (a) और (aa) प्रभावी हो, बल्कि तब भी किया जाना चाहिए जब अपीलीय न्यायालय द्वारा स्वयं निणर्य सुनाने के लिए या किसी अन्य महत्वपूर्ण कारण के लिए ऐसे दस्तावेज की आवश्यकता होती है। यदि प्रतिवादियों ने जो तर्क दिया वह सही है, अर्थात्, बंधक को 1913 में निष्पादित किया

गया था, तो परिसीमा की अवधि पुराने परिसीमा अधिनियम के तहत निर्धारित की गयी है, अर्थात्, 60 वर्ष नए परिसीमा अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए परिसीमा की अवधि है। मुकदमा 1.1.1964 से सात साल की अवधि के भीतर दाखिल किया जा सकता है, अर्थात 1.1.1971 तक किया जा सकता है। चूंकि मुकदमा 30.12.1970 को दायर किया गया था, इसलिए इसे सीमा की निर्धारित अवधि के भीतर माना जा सकता है। मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए प्रतिवादियों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दी जानी चाहिए। [पैरा सं. 11,12] [833-जी-एच; 834-ए-सी]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार सिविल अपील सं. 3322/2008

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ के आरएसए नंबर 1340/1980 में निर्णय व आदेश दिनांक 19-07-2006 से।

अपीलार्थियों की ओर से शंभू प्रसाद सिंह, प्रेम सुंदर झा और के. सी. मैनी।

प्रतिवादियों की ओर से मनोज स्वरूप।

न्यायालय का निर्णय एस. बी. सिन्हा, जे. द्वारा दिया गया।

1. अनुमति दी गई।

2. वर्तमान मामले में शामिल तथ्यात्मक मैट्रिक्स में बंधक के मोचन के लिए एक मुकदमें में परिसीमा की अवधि क्या होगी, यह इस अपील में निहित सवाल है जो पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा 1980 के आरएसए नम्बर 1340 में पारित 19-07-2006 के एक फैसले और आदेश से उत्पन्न होता है।

3. 58 कनाल 11 मरला की वाद संपित्त के संबंध में बंधक का लेन देन यहां पार्टियों के हित में पूर्ववर्तियों द्वारा उनके मध्य दर्ज किया गया था । बंधक विलेख के निष्पादन की वास्तविक तिथि वादी - प्रत्यर्थी को ज्ञात नहीं थी । हालांकि, उक्त गिरवी संपित्तयों को 19-03-1913 को या उसके आस पास गिरवी रखने वालों के नाम पर उत्परिवर्तित कर दिया गया था।

4. उक्त बंधक के मोचन/छुडाने के लिए प्रतिवादियों ने 30.12.1970 या उसके आस पास एक मुकदमा दायर किया था। विद्वान विचारणीय न्यायालय द्वारा प्रथम अपीलीय न्यायालय के रूप में उक्त वाद को इस प्रकार खारिज कर दिया कि बंधक की वास्तविक तिथि ज्ञात नहीं होने के कारण बंधक के मोचन के लिए डिक्री पारित नहीं की जा सकती ।

5. हालाँकि, उच्च न्यायालय ने यहां प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत दूसरी अपील में निम्नलिखित सारभूत विधीक प्रश्न तैयार किये हैं:

> "1. क्या इस सम्बन्ध के बारे मे प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दिया गया निष्कर्ष धारणीय है?
>
> 2. क्या मोचन के माध्यम से कब्जे का वाद परिसीमा अवधि के भीतर है?''

6. यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पक्षकारों के बीच गिरवीकर्ता और गिरवीदारों के रूप में संबंध साबित हो गया था, यह प्रमाणित करने का दायित्व प्रतिवादियों पर थी कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था।

उक्त निष्कर्ष पर उक्त द्वितीय अपील की अनुमति दी गई थी।

7. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री शंभु प्रसाद सिंह ने दलील दी कि चूंकि परिसीमा क्षोत्राधिकार का प्रश्न है, उच्च न्यायालय ने उक्त दूसरी अपील की अनुमति देकर गंभीर त्रुटि की है। यह प्रस्तुत किया गया कि चूंकि उत्परिवर्तन की तारीख बंधक की तारीख नहीं थी, इसलिए मुकदमे को परिसीमा से वर्जित माना जाना चाहिए था।

8. वहीं दूसरी ओर, प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री मनोज स्वरूप ने हमारा ध्यान अतिरिक्त साक्ष्य जोड़ने के लिए प्रतिवादी द्वारा दायर एक आवेदन की ओर आकृष्ट किया है। जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहित के आदेश 41 नियम 27 के तहत परिकल्पित है और प्रस्तुत किया गया कि गिरवी का विलेख जो कि अमृतसर जिले के तरनतारन तहसील के गांव पंगोटा में पंजीकृत किया गया था, जो अब पाकिस्तान में है और जो प्रतिवादियों द्वारा खरीदा जा सकता है, जिस पर यदि विचार किया जाए तो यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित करेगा कि मुकदमा 20-02-1913 को निष्पादित होने वाली परिसीमा की निधार्रित अवधि के भीतर था।

उभयपक्षों के संबंधों का बिंदु विवादित नहीं है। प्रतिवादियों ने अपीलकर्ताओं को देय राशि के भुगतान करने पर बंधक से मुक्ति की डिक्री के लिए उपरोक्त वाद दायर किया। बंधक का विवरण प्रस्तुत किया गया था परंतु बंधक की वास्तविक तिथि ज्ञात नहीं होने का कारण प्रस्तुत नहीं किया जा सका ।

सोहन सिंह और बहादुर सिंह मूलबंधककर्ता थे। मुकदमा दर्ज होने से 10 साल पहले तक सोहन सिंह को नहीं देखा गया था, इसलिए यह मान लिया गया कि वह मर चुका है। प्रतिवादियों को कथित तौर पर उक्त बंधककर्ताओं की संपत्ति विरासत में मिली है और इस प्रकार उन्होंने उनकी जगह ले ली । लिखित कथन में प्रतिवादियों ने दोनों पक्षों के बीच यह कहते हुए संबंधों को नकारा और आपस मे विवाद किया कि-

1. वादपत्र का पैरा सं.1 गलत व त्रुटिपूर्ण है। वाद की भूमि, वादियों की नहीं है, बल्कि कुल भूमि प्रतिवादी क्रमांक 1 के स्थायी निरंतर कब्जे में है। विवादित भूमि जैसा कि पैरा क्रमांक 1. में उल्लेखित है, वह कभी भी प्रतिवादियों के पास बंधक नहीं थीं और कथित बंधक के संबंध में वादपत्र के पैरा सं. 1 में उल्लेखित तथ्य जाली और काल्पिनक हैं और वादपत्र मेरे पास नहीं है ।

9. प्रतिवादी ने स्वामित्व का भी दावा किया और साथ ही वाद भूमि पर भी अपना कब्जा होने का दावा किया। जैसा कि यहां पहले देखा गया है कि अधीनस्थ न्यायालयों ने पाया कि मामले के पक्षकारों के बीच गिरवीकर्ता और गिरवीदार का रिश्ता मौजूद था। मुकदमा केवल परिसीमा द्वारा वर्जित होने के आधार पर खारिज किया गया था ।

हमारी राय में उच्च न्यायालय का यह मानना पूरी तरह से गलत था कि यह प्रमाणित करने का दायित्व प्रतिवादियों पर था कि मुकदमा परिसीमा अवधि से परे था । परिसीमा क्षेत्राधिकार का प्रश्न है । परिसीमा अधिनियम की धारा3 न्यायालय पर एक ऐसा मुकदमा जो परिसीमा द्वारा वजिर्त पाया गया हो उस पर विचार करने के लिए प्रतिबंध लगाती है ।

10. ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय के समक्ष भी अतिरिक्त साक्ष्य जोड़ने के लिए आवेदन दायर किया गया था। इसके बाद कोई आदेश पारित नही किया गया। हमारी राय में प्रतिवादियों ने अतिरिक्त साक्ष्य जोड़ने के लिए मामला बनाया ।

यह कहा गया था कि बंधक विलेख लाहौर जिले में पंजीकृत किया गया था चूंकि यह एक पंजीकृत दस्तावेज है ऐसी स्थिति में इस न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए उक्त आवेदन की अनुमति देनी चाहिए ।

11. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि न्यायालय द्वारा इस तरह के आवेदन पर विचार करने के लिए मनाही की जानी चाहिए लेकिन प्रतिवादियों ने इसके लिए पर्याप्त आधार बनाए हैं।

अपीलीय न्यायालय के क्षेत्राधिकार का प्रयोग न केवल तब किया जाना चाहिए जब आदेश 41 के नियम 27 का नियम (1) आकर्षित किया जाए, बल्कि तब भी किया जाता है जब अपीलीय न्यायालय द्वारा स्वयं निणर्य सुनाने के लिए या किसी अन्य महत्वपूर्ण कारण के लिए ऐसे दस्तावेज की आवश्यकता होती है । यदि प्रतिवादियों ने जो तर्क दिया वह सही है, अर्थात्, बंधक को 1913 में निष्पादित किया गया था, पुराने परिसीमा अधिनियम के तहत निर्धारित, अर्थात् 60 वर्ष के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए परिसीमा की अवधि नया परिसीमा अधिनियम, मुकदमा सात वर्ष की अवधि के भीतर दायर किया जा सकता है, मुकदमा 01-01-1964 से सात साल की अवधि के भीतर, यानी 01-01-1971 तक दायर किया जा सकता है । चूंकि 30-12-1970 को मुकदमा दायर किया गया था, इसलिए इसे परिसीमा की निर्धारित के भीतर माना जा सकता है ।

12. हमारी राय है कि इस मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, प्रतिवादीगण को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दी जानी चाहिए। इसलिए, आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है, और मामले को उच्च न्यायालय को वापस भेजा जाता है और निर्देशित किया जाता है कि वह अतिरिक्त साक्ष्य या तो पक्षों को उसके समक्ष प्रस्तुत करने की अनुमति देकर या संहिता के आदेश 41 नियम 28 की शर्तो के अधीन विचारणीय न्यायाधीश द्वारा उक्त दस्तावेजों को साबित करने की अनुमति देकर रिकॉर्ड पर ले। उपरोक्त हद तक अपील स्वीकार की जाती है। खर्चे अध्यारोपित नहीं किए जाते है ।

डी जी

अपील को आंशिक रूप से स्वीकार किया जाता है।

[यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी साक्षी भाम्भू (आर.जे.एस.), द्वारा किया गया है।]

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।